वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य में संगीत शिक्षण का स्वरूप

मुकेश जैन
सहायक आचार्य (संस्कृत)
राजकीय महाविद्यालय बाड़मेर-राजस्थान
मोबाइल नंबर – 8003959741
ई-मेल – mukesh.lalitjain@gmail.com

जिस प्रकार समुद्र की थाह नहीं होती , उसी प्रकार संगीत अथाह है , अनंत है जो मनुष्य के हृदय में समाविष्ट है | संगीत के बिना जीवन नीरस है | संगीत तो कई बीमार व्यक्तियों की चिकित्सा का साधन है , ख़ुशी को अभिव्यक्त करने का साधन है तो गम को हल्का करने का भी साधन है | देवताओं से लेकर मनुष्यों तक सभी संगीत की उपासना करते हैं , अतः संगीत ईश्वर से निकटता का भी माध्यम है | भारतीय सिनेमा की सफलता में भी संगीत का महत्वपूर्ण योगदान है |

संगीत रत्नाकर ग्रन्थ में संगीत के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि - **'गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते'** इस प्रकार गीत, वाद्य तथा नृत्य तीनों मिलाकर संगीत कहलाता है , किन्तु वर्तमान में अधिकतर लोग गीत तथा वाद्य को संगीत के क्षेत्र में शामिल करते हैं तथा नृत्य को अलग विधा के रूप में स्वीकार करते हैं | संगीत शब्द 'सम्' उपसर्गपूर्व के 'गै' धातु व क्त प्रत्यय से निर्मित है , अतः व्युत्पतिलभ्य अर्थ से गायन की प्रधानता सूचित होती है , परन्तु तीनों कलाएं एक-दूसरे से सम्प्रक्त है | गायन व वादन एक-दूसरे को पूर्ण करते हैं तथा बिना वादन या गायन के नृत्य अधूरा है | गीत में जो भाव निहित होते है ,उनकी सहज अभिव्यक्ति नृत्य के माध्यम से होती है I नृत्य अवं नृत दोनों को अलग मानते हुए उनकी परिभाषा इस प्रकार दी गया है - **'अन्यद भावाश्रयम नृत्यं'** अर्थात् नृत्य दर्शनीय होता है तथा इसमे आंगिक अभिनय की प्रधानता होती है I[1] **'नृत्तम तालल्याश्रयम'** अर्थात् ताल व लय पर आश्रित अभिनय से रहित आंगिक चेष्टा नृत्त कहलाती हैI ये दोनों जब सुकुमार रूप में संपादित होते है तब इन्हें लास्य कहा जाता है तथा जब उद्धत करण व अंगहारों से निवर्तित होते है तब तांडव कहते है I[2] तांडव व लास्य के उद्भावक क्रमश: शिव व पार्वती माने गए हैI नंदी या तंडू तांडव शिक्षक के रूप में नाट्यशास्त्र में वर्णित है I **तुम्बुरु नृत्य-संगीत के प्रसिद्ध आचार्य थे, दत्तिल संगीत के प्रामाणिक संगीतकार थे I**[3] संगीत के बिना नाट्यशास्त्र भी अधूरा है | नाट्यशास्त्र के भरतमुनि ने जो एकादश संग्रह अंग बताये हैं, उनमें 'संगीत' भी शामिल है –

रसभावा ह्यभिनया धर्मो वृति प्रवृतय: |

सिद्धि स्वरास्तथातोद्यं गानं रंगश्च संग्रह: ||[4]

वर्तमान समय में संगीत का शिक्षण औपचारिक व अनौपचारिक दोनों तरीकों से होता है | वास्तव में देखा जाय तो औपचारिक की अपेक्षा अनौपचारिक तरीकों से संगीत का शिक्षण अधिक होता है | यह बड़ी प्रसन्नता की बात है कि वर्तमान में अधिकतर विद्यालयों में संगीत (गान व वाद्ययंत्र) हॉबी क्लास के रूप में पढाये जाते हैं | ऐसी स्थिति में पारंपरिक रूप से संगीत की शिक्षा प्राप्त शिक्षकों व विद्यार्थियों का दायित्व बढ़ जाता है कि वे आगे आने वाली पीढ़ी को संगीत के उस स्वरूप का ज्ञान करवाए जिसमे उन्हें समृद्ध भारतीय शास्त्रीय संगीत का ज्ञान हो सके |

भारत में संगीत का उद्भव कब हुआ , संगीत पर कौन- कौनसे ग्रंथों की रचना की गयी , इन मूल ग्रंथों को पढना क्यों आवश्यक है ? वर्तमान परिस्थिति में यह दुर्भाग्य की बात है कि कई संगीत के विद्यार्थी भी इन तथ्यों से भलीभांति परिचित नहीं है | शास्त्रीय संगीत का अध्ययन-अध्यापन एक विशिष्ट दायरे में सीमित हो गया है किन्तु शास्त्रीय संगीत के व्यापक प्रचार व संरक्षण के अभाव में आधुनिक संगीत को सहेजना भी दुष्कर कार्य होगा |

सर्वप्रथम तो यह बात समझाई जानी चाहिए कि भारत में ज्ञान का आदि स्रोत वेदों को माना जाता है | वैसे तो सभी वेदों में संगीत का वर्णन है, **किन्तु सामवेद को तो साक्षात् गानवेद कहा जाता है** |संगीत के विद्यार्थी को स्वर व उच्चारण का ज्ञान भलीभांति करवाना चाहिए | प्राचीनकाल में स्वर व उच्चारण का कितना महत्त्व था , इसका एक निदर्शन अधोलिखित उदाहरण से जाना जा सकता है जिसमे स्वरदोष के कारण 'वृत्रासुर' मारा गया –

'मंत्रो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्याप्रयुक्तो न तमर्थमाह |

स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेंद्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात् ||[5]

भारतीय संस्कृति के प्राणभूत वेदों की सुरक्षा हमारे महर्षियों ने अष्टविकृतियों की व्यवस्था द्वारा कर दी, सस्वर उच्चारण की इस परंपरा को ऐसा वेदपाठी ही सुरक्षित रख सकता है जिसे संगीत शास्त्र का भलीभांति ज्ञान हो – **'जटा माला शिख रेखा ध्वजो दण्डो रथोघनः|**

अष्टौ विकृतयः प्रोक्तः क्रमपूर्वा मनीषिभिः ||'[6]

'साम' शब्द की व्याख्या वृहदारण्यकोपनिषद में बताई गयी है – **'सा च अमश्चेति तत् साम्नः सामत्वं |'**[7] अर्थात् ऋग्वेद के मन्त्रों में जब स्वरों का आरोहावरोह मिलाया जाता है , तब उसे साम कहते हैं | इसी कारण ऋक-साम को दम्पती भी कहा गया है | कुल 1875 में से 99 ऋचाओं को छोड़कर सब सामवेद की है |

स्वरसप्तात्मक गायन अत्यंत प्राचीन है | **'सप्तधा वै वागवदत्तावद्वै वागवदत् |' (ऐ.ब्रा. 2/7)** | नारदीय शिक्षा में सप्तस्वरों का परिगणन इस प्रकार है –

'प्रथमश्च द्वितीयश्च तृतीयोऽथ चतुर्थकः |

मंद्रकुष्टो ह्यतिस्वार एतान्कुर्वन्ति सामगाः ||'

नारदीय शिक्षा में सामगायन का विस्तारपूर्वक उल्लेख है –

सप्तस्वरासत्रयो ग्रामा मूर्च्छनास्त्वेकविंशतिः |

ताना एकोनपञ्चाशदित्येस्वकारमंडलं ||[8]

इसी प्रकार नारदीय शिक्षा में स्वरों के संचालन के बारे में अत्यंत सुन्दर तरीके से बताया गया है –**अंगुष्ठस्योत्तमे क्रुष्टो ह्यङ्गुष्ठे प्रथमः स्वरः |**

प्रादेशिन्यां तु गांधार ऋषभस्त्नदनन्तरं ||

अनामिकायां षड्जस्तु कनिष्ठायां च धैवतः|

तस्याधसताच्च योन्यासु निषादं तत्र विन्यसेत् ||

इस प्रकार वर्तमान शिक्षण प्रणाली में स्वरसप्तक के उद्गम से विद्यार्थियों को भलीभांति परिचित कराया जाना चाहिए | लौकिक स्वरसप्तक व वैदिक स्वरसप्तक में स्थूल भेद केवल इतना ही है कि लौकिक स्वरसप्तक 'आरोहावरोह' में है, जबकि वैदिक स्वरसप्तक 'अवराहोरोह' क्रम में है |

स्वरप्रदर्शन में दोनों हाथों का प्रयोग होता है | दक्षिणहस्त (दाहिने हाथ) की हथेलियों पर स्वर प्रदर्शित होते हैं व वामहस्त की अँगुलियों पर लय व मात्रा प्रदर्शित की जाती है | गान के समय पद्मासन में गायक को अवस्थित होना चाहिए |[9]

वेदों के बाद उनकी व्याख्यापरख ग्रन्थ वेदांगों का स्थान आता है जो छह है – शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छंद, ज्योतिष | आज जो वेद की ऋचाएं सुरक्षित रह सकी है उनका प्रधान कारण उनका छंदोबद्ध होना ही है | छंद की तुलना मनुष्य के पाँव से की गयी है अर्थात् जिस प्रकार पांवों के बिना हम चल नहीं सकते उसी प्रकार मन्त्रों की गति भी छंद के बिना संभव नहीं है | आचार्य भरत ने कहा भी है – **छंदहीनो न शब्दोस्ति नश्चछंद शब्द वर्जितं |** सभी छंदों को निश्चित लय व ताल पूर्वक गाया जाना चाहिए | हर छंद की गति व यति निश्चित होती है | वर्तमान समय में कई विद्यार्थियों को छंद के लक्षण व उदाहरण तो याद होते हैं, किन्तु लय व ताल का समय ज्ञान नहीं होता | इस प्रकार यह अत्यंत श्रेयस्कर होगा यदि संगीत के विद्यार्थी हिंदी व संस्कृत के विद्यार्थियों की इस क्षेत्र में मदद करते हुए उन्हें छंदों की गेयता का ज्ञान करा सके | वास्तव में संगीत छंद, लय व ताल का विशुद्ध मिश्रण ही है | ये तीनों परस्पर गुंथे हुए है | छंद का मूल लक्षण लयबद्धता है , यही लय जब निश्चित स्वरूप में व्यक्त होती है तो छंद की उत्पति होती है | छंद द्वारा काव्य का तथा ताल द्वारा गेय का मान होता है | भारतीय संगीत के सम्बन्ध में कहा गया है कि श्रुति इसकी जननी तथा लय इसके जनक है |प्राचीनकाल से ही वीणा प्रमुख वाद्य रहा है ,स्वप्नवासवदत्तम में उदयन की घोषवती वीणा प्रमुख आधार है तो संगीत के मर्मज्ञ महाकवि माघ की महती वीणा का प्रभावशील चित्रण निम्नलिखित श्लोक के माध्यम से किया गया है –

रणद्धीराघट्नया नभस्वत: पृथकविभिन्नश्रुतिमंडलै: स्वरै: I

स्फुटीभवदग्रामविशेषमूर्च्छनामवेक्षमाणम महतीं मुहुर्मुहु:II[10]

चार प्रकार के वाद्यों का ज्ञान हर संगीत के जिज्ञासु को होना चाहिए –

ततं तंत्रीगतं ज्ञेयमवनद्धन्तु पौष्करं |

घनस्तु तालो विज्ञेय: सुषिरो वंश एव च ||[11]

नाट्यशास्त्र के 28वें से लेकर 34वें अध्याय तक संगीत शास्त्र विषयक विशद चर्चा की गयी है | अतः यह ज्ञान संगीत शिक्षण का अभिन्न अंग होना चाहिए ताकि वे समृद्ध भारतीय संगीत परंपरा से परिचित हो सके | 28वें अध्याय में चार प्रकार के वाद्य, सात स्वर , ग्राम , मूर्च्छना , श्रुति आदि का सुन्दर विवेचन है | 29वें अध्याय में वीणा तथा 30वें अध्याय में बांसुरी का स्वरूप व वादन विधि का वर्णन है | 31वें अध्याय में लय, ताल व अवनद्ध वाद्यों का वर्णन है | 32वें ध्रुवाध्याय में पात्रों के प्रवेशावसर पर गेय ध्रुवाओं का वर्णन है | गायक, वादक व बांसुरी वादक का निरूपण संगीत के आचार्य व शिष्य की योग्यता तथा गायन व वादन क्रमशः स्वभावतः स्त्री व पुरुष

द्वारा करने का निदर्शन है | 33वें वाद्याध्याय में वाद्यों के अधिदेवताओं, निर्माण, वादन तथा स्वाति व नारद द्वारा अवनद्ध वाद्य के प्रवर्तन का रोचक आख्यान वर्णित है |[12]

इस प्रकार सार रूप में कहा जा सकता है कि जीवन में हर तरफ से संगीत है | रस काव्य की आत्मा है , श्रेष्ठ संगीत उस रस की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम है | नवों रसों में संगीत है, डोरबेल में संगीत है, अच्छी वाणी में संगीत है, बर्तनों का विधिपूर्वक टकराना भी संगीत है, कोयल की कूक, मुर्गे की बांग आदि सब कुछ संगीतमय है | इस प्रकार आधुनिक संगीत शिक्षण में भारत की प्राचीन शिक्षण व्यवस्था व संगीत ग्रंथों का ज्ञान देते हुए संगीत को और भी समृद्ध बनाया जाना चाहिए |

सन्दर्भ-

1 धनञ्जय विरचित दशरूपकं , बैजनाथ पाण्डेय , मोतीलाल बनारसीदास | पृ.स.- 14
2 वही पृ.स.- 15,17,18
3 भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्रं , बाबूलाल शुक्लशास्त्री , चौखम्भा संस्कृत संस्थान | पृ.स.- 24,25
4 भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्रं 6/10
5 पाणिनीय शिक्षा , हंसा प्रकाशन (डॉ. द्विजेन्द्रनाथ मिश्र) 10/4 पृ.स.- 46
6 वैदिक साहित्य का इतिहास , चौखम्भा संस्कृत संस्थान वाराणसी I पृ.स.-18
7 वृहदारण्यक उपनिषद् 1/3/22
8 वैदिक साहित्य का इतिहास , चौखम्भा संस्कृत संस्थान वाराणसी | पृ.स.-112
9 वही (पृ.स.- 113)
10 शिशुपालवधं 1/10
11 भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्रं 6/29
12 भरतमुनि कृत नाट्यशास्त्रं , बाबूलाल शुक्लशास्त्री , चौखम्भा संस्कृत संस्थान | पृ.स.- 8,9